मजदूरों का अपना कोई देश नहीं होता। दुनिया के मजदूरो, एक हो !

फरीदाबाद मजदूर समाचार

मजदूरों की मुक्ति खुद मजदूरों का काम है। दुनिया को बदलने के लिए मजदूरों को खुद को बदलना होगा।

RN 42233

नई सीरीज नम्बर 10 अप्रैल 1989 50 पैसे

एस्कार्ट्स

शतरंज की आड़ी-टेढ़ी चालें

दिसम्बर 88 के अंक में हमने लिखा था, "एस्कोर्ट्स मजदूरों ने इनसैनटिव स्कीम के चक्कर में 10 महीनों में 12 महीनों का प्रोडक्शन देकर मैनेजमेंट को 25 परसैन्ट मजदूर एक्स्ट्रा होने की धारदार तलवार पकड़ा दी है। कब और कैसे यह तलवार मजदूरों के सिर काटेगी यह अभी साफ नहीं है पर शतरंज की एक चाल कुछ ऐसी हो सकती है :···"। इस बीच की घटनाओं से लगता है कि मैनेजमेंट और यूनियन प्रधान एस्कोर्ट्स मजदूरों के खिलाफ कुछ ज्यादा ही आड़ी-टेढ़ी चालें चल रहे हैं।

मार्च के आरम्भ में एस्कार्ट्स मजदूरों के हित में एक शानदार समझौते की खबर अखबारों ने छापी—असल में छपवाई गई। लेकिन पेन्शन आदि-आदि वाले लीडरों द्वारा "मजदूरों के हित में किये" इस "शानदार" समझौते को भी एस्कोर्ट्स मजदूरों ने नहीं माना। ऐसी ही बात नन्दा-स्वराज पाल के झगड़े के समय वाले 1983 में हुये "शानदार" समझौते के तहत 1986 में I. E. NORMS लागु करते समय हुई थी। तब भी एस्कोर्ट्स यूनियन प्रधान ने आग-बबूला होकर "दो बातें" नाम से पर्चे में एस्कोर्ट्स मजदूरों को धमकियाँ दी थी। I. E. NORMS के गोल-मोल नाम का मतलब एस्कोर्ट्स मजदूरों पर तीस परसैन्ट वर्क लोड बढाना था—और मैनेजमेंट व यूनियन लीडरों ने आखिरकार उसे मजदूरों पर थोप दिया था। 1987 में हुए तीन-साला मैनेजमेंट-यूनियन समझौते में फिर मजदूरों पर वर्क लोड बढाया गया—इस बार इनसैनटिव स्कीम के नाम से। एस्कोर्ट्स मजदूर इस समझौते के खिलाफ भी चीखे-चिल्लाये पर इनसैनटिव स्कीम भी मैनेजमेंट और यूनियन ने मिल कर मजदूरों पर थोप दी। अपना खून-पसीना एक कर, अपनी उमर घटाते हुए एस्कोर्ट्स मजदूरों ने अधिक से अधिक इनसैनटिव के लिए दौड़ना शुरू किया...उन्हें हांफते हुए दौड़ते एक साल भी नहीं हुआ था कि मैनेजमेंट और यूनियन ने एक और "शानदार" समझौता मजदूरों के कन्धों पर लाद दिया।

मैनेजमेंट ने इनसैनटिव स्कीम से "सिद्ध" कर दिया कि मजदूर असल में और ज्यादा काम कर सकते हैं और कि वे अब तक जान-बूझ कर कम काम करते थे। एस्कोर्ट्स यूनियन प्रधान मैनेजमेंट से सहमत हैं—उन्होंने तो I. E. NORMS के नाम से तीस परसैन्ट वर्क लोड बढवाते समय भी अपने "दो बातें" वाले पर्चे में कहा था, "कुछ लोग काम कम करने तथा मौज उड़ाते रहने की सोच रहे हैं...आपको बाद में दुगनी प्रोडक्शन बढानी पड़ गई और आपको कुछ भी न मिला तब क्या होगा···"। और वही यूनियन प्रधान 15 परसैन्ट वर्क लोड थोपने के लिए मार्च 89 वाले पर्चे में एस्कोर्ट्स मजदूरों से कहते हैं, "आप यह कहें कि हम कुछ लोगों की गलत बात मानते रहें, आपको सब कुछ दिलाते रहें और आपको कुछ मेहनत न करनी पड़े, ऐसा नेतृत्व सुभाष सेठी नहीं कर सकता।" हमें यह तो नहीं मालूम कि कार में घूमते खद्दरधारी मौज उड़ाते, गलत बात करते हैं या साइकिल दौड़ाते व मशीनों से जूझते नीले कपड़े पहने मजदूर, पर हाँ, यह बात साफ है कि एस्कोर्ट्स मैनेजमेंट और यूनियन ने मजदूरों को दंड देने का फैसला कर लिया है। इनसैनटिव के लिए स्टैप बढा कर मजदूरों को पैसे कम दिए जायेंगे और 15 परसैन्ट वर्क लोड बढ़ा कर उनसे प्रोडक्शन ज्यादा लिया जायेगा—इसके बदले मजदूरों को यह मिलेगा, वह मिलेगा की बकवासें भूख से रोते बच्चे के सामने झुनझुना बजाना है।

पिछले छः-सात साल से यह बात बार-बार सामने आ रही है कि एस्कोर्ट्स के मजदूर और वहाँ के यूनियन लीडर हर प्रमुख सवाल पर एक-दूसरे के खिलाफ हैं। साफ है कि या तो एस्कोर्ट्स के मजदूर बेवकूफ हैं जो अपने हित की बातें नहीं समझते या फिर एस्कोर्ट्स यूनियन के लीडर बदमाश हैं जो मजदूरों के भले के नाम पर मैनेजमेंट का भला करते हैं। हमारे विचार से एस्कोर्ट्स के मजदूर बेवकूफ नहीं हैं।

मजदूर अपना भला-बुरा खुद समझते हैं इसलिए उन्हें अपना नेतृत्व खुद करना चाहिए। मसीहा बनकर मजदूरों की चमड़ी उतारते हुये भी उन पर एहसान जताने वाले बिचौलियों को एक तरफ पटक कर ही मजदूर असलियत से दो-दो हाथ कर पायेंगे। और तभी मजदूर आगे की राहें खोल पायेंगे।

ईस्ट इंडिया कॉटन

सब मैनेजमेंटें गुन्डे पालती हैं पर साथ-ही-साथ उनके पंख भी कतरती रहती हैं ताकि गुन्डे मैनेजमेंट की मुठ्ठी में रहें। और चूंकि डन्डे के बल पर मजदूरों को लगातार दबाने से बगावत का खतरा बढ़ता है, इसलिये पूंजीवादी व्यवस्था मजदूरों को उल्लू बनाने के लिये टाइम-ब-टाइम चुनावों के ड्रामे करती है। जो मैनेजमेंटें इन गूढ पूंजीवादी बातों को नहीं समझती, उन्हें डी सी-एस पी-मन्त्री समझाते रहते हैं।

ईस्ट इंडिया मैनेजमेंट 79 की हड़ताल को कुचलने के लिये कुख्यात दाल फ्राई गुन्डों को आगे लाई थी। गुन्डों की दिन-दहाड़े जरूरत खत्म होने के बाद भी यह मैनेजमेंट उन्हें दिन-दहाड़े इस्तेमाल करती रही। डी सी साहब ने मैनेजमेंट को कई बार उसकी बेवकूफी समझाने की कोशिश की पर सफल नहीं हुये थे। पर मजदूरों में पनपते असन्तोष को देखकर और दालफ्राई पर खर्च का हिसाब लगाकर मैनेजमेंट को आखिरकार डी सी की बातें समझ में आ गई। चटपट 28 फरवरी को नोटिस लगाया गया कि 4 मार्च को चुनाव होंगे। मजदूरों में कुछ हलचल हुई—इस ड्रामे से कुछ नहीं बदलेगा यह जानते हुये भी मजदूरों ने कुछ बदलाव की आशायें बाँधी। दाल फ्राई और अन्य लोग "चुने" गये।

लेकिन बिचौलियों पर आस मजदूरों की बरबादी की राह है। कानपुर के कपड़ा मजदूरों ने 5 दिन रेलें जाम करके अपनी माँग मनवाकर मजदूरों की बाजुओं की ताकत की एक झलक हम सबको दिखा दी है। कानपुर मजदूरों के उदाहरण से सीखें। केवल अपनी ताकत से ही मजदूर अपने हित हासिल कर सकते हैं।

—×—

* किसकी दिल्ली किसकी शान, नागरिक महामारी जाँच समिति की दिल्ली में हैजा महामारी पर एक रिपोर्ट : "इतिहास के कई रूप होते हैं—एक में शासन और सत्ता के खेल का ब्योरा होता है, दूसरे में आम लोगों की अपनी कहानी होता है जिनके जीने-मरने का कोई महत्व नहीं होता है और जो समाज में फैले सामाजिक-आर्थिक-राजनीतिक अन्याय व आतंक के शिकार होते रहते हैं : यह रिपोर्ट, ऐसे ही इतिहास का एक टुकड़ा है।"

इस नागरिक पहलकदमी का हम स्वागत करते हैं। हमारी कामना है कि इस पथ पर अधिकाधिक नागरिक आगे बढ़ें। यह रिपोर्ट हिन्दी और अंग्रेजी में उपलब्ध है।

सम्पर्क—डा० जे० पी० जैन, 4205 बुद्ध नगर, त्री नगर, दिल्ली-110035

—×—

मजदूरों के खत

१. जी० जी० टैक्सटाइल

13 फरवरी 82 को मालिक ने फैक्ट्री बन्द कर दी। 35 मजदूर थे। हम तीन को छोड़कर बाकी सबने हिसाब ले लिया। हमने डिमान्ड नोटिस दिया। एक महीने बाद नये मजदूर लगाकर मालिक ने फैक्ट्री फिर शुरू कर दी।

चन्दीगढ से हमारा केस तीन बार रिजेक्ट होकर आया। चौथी बार हमने रजिस्ट्री से लेबर कमिश्नर को बताया कि फैक्ट्री चल रही है। तब हमारा केस रेफर होकर ट्रिब्यूनल में आया। चार साल केस चला। फैसला हमारे हक में हुआ। पूरे पैसों के साथ ड्यूटी पर लेने का आर्डर हुआ। लेकिन मालिक ने दुबारा फैक्ट्री बन्द करके मशीनें बेच दी। लेबर कोर्ट से 28-10-86 को हमारे लिये 33, 525 रु०, 33525 और 32,120 रु० का आर्डर हुआ था। इस पैसे के लिये हमने डी एल सी और समझौता अधिकारी से बार-बार कहा पर पैसा हमें नहीं मिला। तब हमने मालिक के घर का पता—संजय केजरीवाल, 1 ई महारानी बाग, नई दिल्ली, लेबर कमिश्नर को चन्दीगढ भेजा। उन्होंने 31-2-87 को रिकवरी सर्टीफिकेट कलेक्टर तीस हजारी कोर्ट, दिल्ली को भेज दिया। हम कलेक्टर से मिले तो उन्होंने कहा कि जी जी टैक्सटाइल संजय के नहीं, उसके पिता बी० केजरीवाल के नाम है। तब हमने यह नाम चन्दीगढ भेजा। फिर लेबर कमिश्नर ने 17-3-88 को बी० केजरीवाल के नाम से रिकवरी कलेक्टर को भेजी। हम फिर कलेक्टर से मिले तो वह बोला कि मकान उसकी बीबी के नाम है और वह बम्बई रहता है। कलेक्टर ने हमसे कहा कि उसका बम्बई का पता लाओ। हम निराश हो गये। हम वकील से मिले। वकील हमारे साथ दिल्ली

हमारे लक्ष्य हैं—1. मौजूदा व्यवस्था को बदलने के लिए इसे समझने की कोशिशें करना और प्राप्त समझ को ज्यादा से ज्यादा मजदूरों तक पहुँचाने के प्रयास करना। 2. पूंजीवाद को दफनाने के लिए जरूरी दुनिया के मजदूरों की एकता के लिए काम करना और इसके लिए आवश्यक विश्व कम्युनिस्ट पार्टी बनाने के काम में हाथ बँटाना। 3. भारत में मजदूरों का क्रान्तिकारी संगठन बनाने के लिए काम करना। 4. फरीदाबाद में मजदूर पक्ष को उभारने के लिए काम करना।

समझ, संगठन और संघर्ष की राह पर मजदूर आन्दोलन को आगे बढ़ाने के इच्छुक लोगों को तालमेल के लिए हमारा खुला निमन्त्रण है। बातचीत के लिए बेझिझक मिलें। टीका-टिप्पणी का स्वागत है—सब पत्रों के उत्तर देने के हम प्रयास करेंगे।

सम्पर्क—मजदूर लाइब्रेरी, आटोपिन झुग्गी, बाटा चौक के पास, एन० आई० टी० फरीदाबाद—121001

गया तब कलेक्टर ने कहा कि संजय और बी० केजरीवाल दोनों के नाम से रिकवरी सर्टीफिकेट मंगा लो, काम हो जायेगा। चन्दीगढ हमारे द्वारा तीन रजिस्ट्रियाँ भेजने के बाद वह कागज भी आ गया। 8-12-88 को हम फिर कलेक्टर से मिले। पहले वाला कलेक्टर बदल गया था। दूसरे ने फिर वही बम्बई वाली बात की। हमारे बार-बार जाने पर वह कलेक्टर हमसे बी० केजरीवाल की सम्पत्ति का ब्यौरा माँगने लगा। फिर कलेक्टर ने हमें बताया कि जी जी टैक्सटाइल के नाम से फरीदाबाद में उसका एक प्लाट है, 25-30 लाख में बेचने की बात चल रही है। प्लाट बिकते ही वह पैसे जमा कर देगा। और दूसरी तरफ कलेक्टर ने 27-2-89 को चन्दीगढ लिखा कि बी० केजरीवाल का पता गलत है, सही पता भेजो। चन्दीगढ से उस पत्र की कापी हमें मिली तो हम दिल्ली में मालिक की कोठी पर गये और वहाँ उसे देखकर हम भागे-भागे कलेक्टर के पास गये। हमारी बात सुनकर कलेक्टर ने कहा कि वह बी० केजरीवाल से मिल चुका है और उसने कहा है कि उसे कितना ही परेशान कर लो, 15 मार्च से पहले वह पैसे जमा नहीं कर सकता। कलेक्टर ने हमें होली के बाद आने को कहा। होली के बाद हम कलेक्टर से मिले तो वह कहने लगा कि बी० केजरीवाल बम्बई रहता है। कलेक्टर मालिक से पैसा खा गया है।

राम नरेश, हरिचन्द, नैपाल सिंह—जी जी टैक्सटाइल के मजदूर

[पत्र हमने कुछ छोटा कर दिया है]

—×—

२. बेलमोन्ट रबड़ इन्स्ट्राज

58 बी इन्डस्ट्रीयल एरिया की इस फैक्ट्री की मैनेजमेंट ई एस आई कार्ड, प-स्लिप, पहचान-पत्र, लीव बुक, लीव कार्ड नहीं देती। हम मजदूरों ने लेबर डिपार्टमेंट से इन चीजों की मांग की। इनके बारे में हमने श्रम निरीक्षक को 15-6-88, 1-7-88, 27-2-88, 13-9-88, 6-2-89 को पत्र दिये। लेबर डिपार्टमेंट ने यह चीजें हमें नहीं दिलवाई। हमारे यहाँ 69 कर्मचारी है। हमारी माँगों के विरोध में मालिक ने 11-3-89 से लाकआउट कर दिया। यहाँ का मैनेजर महेन्दर लूथर गुन्डों के बल पर हम मजदूरों को परेशान कर रहा है। राजमंगल, बेलमोन्ट रबड़ का मजदूर

दुनिया में मजदूरों के संघर्ष

कुवैत में भारतीय मजदूरों की हड़ताल

भारत जैसे देशों में मजदूरों की हालत बहुत-ही खराब है। इन इलाकों में जिन्दा रहने के लिये संघर्ष करते हुये भी, बेहतर जीवन की तलाश में मजदूर अन्य देशों में जाने को तैयार रहते हैं। कई देशों में पिछली पीढ़ियों के मजदूरों के संघर्षों की बदौलत और थोड़े-से देशों में कुछ विशेष कारणों से मजदूरों की हालत भारत जैसे देशों से बेहतर है। और उन देशों में पूंजी के नुमाइन्दे वहाँ के मजदूरों को कन्ट्रोल में रखने के लिये तथा सस्ते मजदूरों के लिये भारत जैसे देशों में जाल फेंकते हैं। दलालों के लिये बिचौलियों ने दिल्ली-बम्बई-कलकत्ता-मद्रास आदि में भर्ती दफ्तर खोल रखे हैं। और जैसे यहाँ सरकारी या लिमिटेड कम्पनी में परमानेन्ट नौकरी के लिये मोटी रिश्वत ली जाती है, वैसे ही बाहर देश में नौकरी के लिये मजदूरों से पैसे ऐंठे जाते हैं। 15-20 हजार की रिश्वत के लिये पत्नी के जेवर तथा एक-आधा बीघा जमीन बेचकर, धन बटोरने के सुनहरे सपने लेकर मजदूर भारत जैसे देशों से निकलकर अमरीका-यूरोप-अरब-ईरान जाते हैं। और जल्दी ही पूंजी और मजदूरों के बीच अटल शत्रुता की हकीकत इन मजदूरों के सामने आ जाती है। यहाँ हम चार महीनों से तनखा न मिलने और पशुओं की तरह रखे जाने के खिलाफ कुवैत में भारतीय मजदूरों की 24 जनवरी से 22 मार्च 89 तक चली सफल हड़ताल की रिपोर्ट दे रहे हैं। यह इस समझ को पुष्ट करने के लिये है कि हर जगह मजदूरों द्वारा संघर्ष करने जरूरी हैं और जिस चीज के बारे में हमें विचार करना चाहिये वह है—अपने संघर्षों को मजदूर ताकतवर कैसे बनायें? संघर्षों में सफलता के लिये मजदूरों की राह कौन-सी है?

सामग्री हमने हिन्दू, हिन्दुस्तान टाइम्स, टाइम्स ऑफ इण्डिया और इकॉनोमिक टाइम्स अखबारों से ली है। पूंजीवादी अखबारों में भी यह हकीकत साफ-साफ उभरती है कि पूंजी के नुमाइन्दों के कुवैत में हथकन्डे, भारत में इनके हथकन्डों जैसे ही हैं। भाषा, खान-पान, रंग-रूप के भेदों के बावजूद दुनिया-भर के मजदूरों में जैसे क्वालिटी का कोई फर्क नहीं है, वैसे ही दुनिया-भर में पूंजी के नुमाइन्दों में भी क्वालिटी का फर्क नहीं है। सब चार मौसेरे भाई हैं इसलिए "भारतीय" हित के नाम पर यहाँ के मजदूरों को राजीव गाँधी के हाथों बलि के बकरे नहीं बनना चाहिए और "पाकिस्तानी" हित के नाम पर पाकिस्तान में जन्मे मजदूरों को बेनजीर भुट्टों के हाथों हलाल नहीं होना चाहिये।

पूँजीवाद में उत्पादन की अलग-अलग शाखाओं में आपस में भी मजदूरों के खून-पसीने की उपज के लिए छीना-झपटी होती है। स्टील उद्योग सस्ता कोयला और स्टील के ऊँचे दाम माँगता है, कार उद्योग सस्ता स्टील और गाड़ियों की ऊँची कीमत माँगता है। इस किस्म की पूंजीवादी खींचा-तानी में 15-20 साल पहले दुनियाँ में तेल उद्योग से जुड़े गिरोहों ने आपसी एकता कायम करके उत्पादन की अन्य शाखाओं में लगी पूंजी के मुकाबले काफी ज्यादा मलाई हड़प ली थी। दुनिया के पैमाने पर हुई इस गिरोहबन्दी से अरबिया के शाह, इराक-ईरान के शासकों, कुवैत के अमीर आदि को आँधी के आम हाथ लगे। अचानक इस इलाके में शेखों, अमीरों, मुल्ले-मौलवियों और उनके रिश्तेदारों के लिए लम्बी-लम्बी कारें आयीं। यूरोप अमरीका बम्बई गोवा में सैर-सपाटे और मौज-मस्ती करते नये धन्ना सेठों के हवाई जहाजों के लिए हवाई अड्डों का निर्माण किया गया। और उनके रहने के लिए आलीशान महल बनाये गये। साथ-साथ चली तेल-कूये खोदने की दौड़ और पाइप लाइनें बिछाने आदि के काम। इन सब कामों को करने के लिए लाखों मजदूरों की जरूरत थी। तेल वाले इन रेगिस्तानी इलाकों में आबादी बहुत ही कम थी और जो लोग थे वे पशु पालने वाले घुम्मकड़ लोग थे। इसलिए अन्य देशों से थोक में मजदूर मँगाये गये। शुरू में यूरोप-अमरीका से भी मजदूर मँगाये गये पर उनके भाव ऊँचे थे। फिर चीन-भारत-पाकिस्तान बँगलादेश-श्रीलंका-फिलिस्तीन से टके सेर लाखों मजदूर मँगवाये गए। मजदूरों ने रेगिस्तान की काया पलट दी

लेकिन पूँजीवाद में उत्पादन की एक शाखा में लगी पूँजी अधिक समय तक दूसरी शाखाओं में लगी पूँजी से ज्यादा मलाई नहीं हड़प सकती। यह तेल से जुड़ी पूँजी के साथ भी हुआ। तेल का अत्यधिक फूला गुब्बारा कुछ पिचक गया। पर आसमान में उड़ने वाले वर्षों के दौरान कई चीजें हुई थीं जिनकी अपनी एक गति है। लाखों मजदूर एक हकीकत बन गए थे। खरबों-खरब रुपयों से अरबों-खरबों रुपयों में लुढ़कते शेख-अमीरों को मजदूरों के तमतमाते चेहरों का भूत सताने लगा। अपनी रक्षा के लिए एक तरफ उन्होंने पाकिस्तान आदि से फौज भाड़े पर ली और दूसरी तरफ रेगिस्तान में मारी-मारी फिर रही अपनी रैय्यत को धर्म व देशभक्ति की अफीम और विदेशियों से नफरत की घुट्टी पिला कर राजधानियों में अपने इर्द-गिर्द बसाने की स्कीमें बनाईं।

कुवैत में 12,400 मकान बनाने की ऐसी ही एक स्कीम थी। चीनियों ने उस स्कीम पर काम शुरू किया था पर जल्दी ही उसे छोड़ दिया— लगता है कि पिचकते तेल गुब्बारे की वजह से कुवैत ने रेट कुछ ज्यादा ही गिरा दिये थे। तब कुवैती कम्पनी ने भारतीय ठेकेदारों से सौदा किया। सितम्बर 86 में भारतीय ठेकेदारों ने मजदूर भर्ती किये। ठेकेदारों ने प्रचार किया था कि हर मजदूर को चार हजार रुपये महीना तनखा और मुफ्त में खाना व रहने का स्थान मिलेगा। दसियों हजार मजदूरों ने भर्ती के लिए फार्म भरे, पासपोर्ट बनवाये। ठेकेदारों ने जिन मजदूरों को भर्ती किया उनमें हर एक से 15-20 हजार रुपये की रिश्वत ली। यू पी, केरल, पंजाब, गुजरात, करनाटक और दिल्ली के मजदूर रिश्वत देकर भर्ती हुए। कुवैत पहुँचने के बाद मजदूरों से हर महीने 3500 रुपये की रसीद पर दस्तखत करवाये जाते और उन्हें दिये जाते 2800 रुपये। इस 2800 में से भी ठेकेदारों ने 500 रुपये खाने के और 300 रहने के काटे। रहने के नाम पर मजदूरों को छोटे-छोटे कमरों में पशुओं की तरह ठूंस दिया गया था। उनसे 15 घन्टे रोज काम लिया जाता था और बीमार होने पर इलाज के लिए कोई प्रबन्ध नहीं था। इस सब धोखाधड़ी के बावजूद मजदूर इस दिलासा से काम करते रहे कि चलो कुछ पैसा तो बचाकर ले ही जायेंगे। पर मजदूरों के वेतन देने में भी टालमटोल की जाने लगी। अलग-अलग भाषा बोलने वाले और विदेश में! क्या करें? मजदूर होने की उनकी हकीकत ने दमन और शोषण के खिलाफ मजदूर एकता की शक्ल ली। वेतन न दिये जाने के खिलाफ इन मजदूरों ने अगस्त 88 में हड़ताल की पर जल्दी ही आश्वासन देकर उन्हें मना लिया गया। पर बहाने बना कर मजदूरों की तनखा दी नहीं मजदूरों ने अलग-अलग भाषाओं में अखबार वालों से कहा, "हमसे कहा जाता कि शेख पैरिस में है या अमरीका में है। जैसे ही शेख लौटेगा हमें पैसे दे दिये जायेंगे। पर लगता है कि शेख कुवैत में कभी होता ही नहीं।" और धमकी के तौर पर ठेकेदार कहते कि शेख के रिश्तेदार मंत्री हैं।

पर झूठे आश्वासनों से मजदूरों को कब तक बहकाया जा सकता है? और धमकियों से भी एक हद से ज्यादा मजदूरों को नहीं दबाया जा सकता। 900 मजदूरों ने दिसम्बर 88 में बकाया वेतन के लिए हड़ताल कर दी। सात दिन तक चली यह हड़ताल भारतीय दूतावास के अधिकारियों के इस आश्वासन के बाद खत्म की गई कि मजदूरों को शीघ्र ही उनके वेतन दे दिए जायेंगे। पर यहाँ पर थोक में दिये जाने वाले मंत्रियों के आश्वासनों की तरह के ही आश्वासन विदेशों में भारतीय दूतावासों के अधिकारी देते हैं। मजदूरों का चार महीनों का वेतन जब बकाया हो गया तब मजदूर कमर कस कर मैदान में उतरे। और इस तरह फी-आदमी आमदनी के हिसाब से दुनिया के सबसे अमीर देश, कुवैत में 24 जनवरी 89 को मजदूरों की सबसे बड़ी हड़ताल शुरू हुई। मजदूरों की माँग थी कि उनकी बकाया तनखा दी जाये और उन्हें घर जाने दिया जाये।

मजदूरों के अन्य संघर्षों की ही तरह इस संघर्ष की जड़ में भी लम्बे समय तक उन द्वारा झेला दुख-दर्द है। ठण्ड लगने और चिकित्सा में लापरवाही से निजामाबाद का एक मजदूर मर गया। 22 दिन तक उसकी लाश वहाँ रखी रही—कोई बहुगुणा मर जाये तो मिनटों में अमरीका से उसकी लाश लाने का प्रबन्ध सरकार करती है। ऊपर से ठेकेदारों ने धमकी दी, "तुम 22 साल बाद भी इस देश से बाहर नहीं जा सकोगे।" दुख-दर्द और दमन की भट्टी में ढली मजदूरों की फौलादी एकता—और नतीजा है 66 दिन की सफल हड़ताल।

मजदूरों की हड़ताल के दौरान अन्य मजदूरों ने मदद की। हड़ताली मजदूरों के जलूसों में बाकी मजदूर भी शामिल हुए। इस संघर्ष से प्रभावित होकर एक सफाई कम्पनी में काम कर रहे 150 भारतीय मजदूरों ने भी अपने बकाया वेतन के लिए हड़ताल कर दी। कुछ समय पहले तक कुवैत में कोई मजदूर आन्दोलन नहीं था, अब हड़ताली मजदूरों और उनके हमदर्दों के जलूस रोज की बात हो गये हैं।

मजदूरों के संघर्षों से कुवैत सरकार को पसीना आ गया। हड़ताल से निपटने के लिए मन्त्रीमण्डल की बैठकें हुईं। पूंजी के भारतीय नुमाइन्दों से मदद माँगी। दिल्ली से अधिकारी बुलाये गए। हड़ताली मजदूरों को पुचकारने-धमकाने के पूंजीवादी हथकन्डे नये सिरे से आजमाये गये पर मजदूर डटे रहे। 66 दिन की हड़ताल के बाद कुवैत सरकार को झुकना पड़ा—50 लाख रुपये मजदूरों को तत्काल दिये जायेंगे और 22 लाख रुपये कोर्ट में फैसले के बाद। मजदूर चाहते थे कि पैसे मिलने के बाद आधा दिन का समय खरीददारी के लिए उन्हें मिले पर खिसियानी बिल्ली खम्भा नोचे की तरह कुवैत सरकार 50 लाख देने के बाद एक मिनट भी इन मजदूरों को कुवैत में नहीं रहने देगी।

अलग-अलग देशों में बढ़ रहे मजदूरों के संघर्ष और उनमें तालमेल की सम्भावना तथा आवश्यकता आज मजदूर वर्ग की कार्य सूची पर है। इसके लिए दुनिया के मजदूरों का संगठन फिर से बेहद जरूरी हो गया है। और हमारे पुरखों ने विरासत में हमें दुनिया के मजदूरों का संगठन बनाने के तीन अनुभव दिये हैं। अपने पुरखों के अनुभवों से सीखकर और वर्तमान से निपटने के लिए क्रान्तिकारी सिद्धान्त को विकसित करके पूँजीवाद को दफनाने के संघर्ष में हम जरूर सफल होंगे।

कुवैत तक में हो रहे मजदूरों के संघर्षों से सब मजदूरों को उत्साहित होकर आगे बढ़ने के लिये कदम उठाने चाहियें।

स्वत्वाधिकारी व सम्पादक शेरसिंह द्वारा आटोपिन झुग्गी, फरीदाबाद से प्रकाशित व अशोक कम्पोजिंग एजेन्सी द्वारा, मानस प्रिंटिंग प्रेस, दिल्ली-110031 में मुद्रित।